योग मनोविज्ञान – योग का मानसिक स्थिरता की दृष्टी से अध्ययन।

[1]*चौधरी सुखद सुधीर*

[1]सहाय्यक प्राध्यापक, वि आ म वि अमरावती

धर्मार्थ काममोक्षामारोग्यं साधनं यतः।
तस्माद् आरोग्यदानेन तदत्तम स्याचतुष्टम॥
(स्कंदपुराण)

चारों पुरुषार्थ की प्राप्ति के लिए निरोगी होना अपेक्षित है शरीर और मन दोनों ही के आरोग्य को निरोगी माना जाता है।

शारीरिक व्यायाम का वर्णन निम्न प्रकार से किया गया है,

1. शरीर आयासजनक कर्म व्यायाम संज्ञतम। सुश्रुत

2. व्यायाम स्थैर्य कराणाम् ।चरक

3. तुलाभ्रमण गुणकर्ष धनुराकर्षणाभी: ।
आयामों विविध अंगनाम
व्यायामइतिकिर्तित:॥(धनुर्वेद)

तूलभ्रमणकरना ,रस्सी खींचना, धनुष्य पर रस्सी लगाकर बाण चलाना आदि कर्मों को व्यायाम माना गया है। उपरोक्त कर्मों से शरीर के का आयास होता है ,जिससे उन अंगों की वृद्धि होती है ,तथा शरीर में रक्ताभिसरण बढ़कर हृदय गति एवं श्वास की गति की भी वृद्धि होती।

योग करने से उपरोक्त लक्षण नहीं मिलते,अपितु श्वसन पर नियंत्रित तथा अत्यधिक कष्ट के बिना शरीर का आयास किया जाता है। योग तथा व्यायाम में यह मूलभूत अंतर है। इसके अलावा योग द्वारा मानसिक स्थिरता, ज्ञान की प्राप्ति तथा मोक्षप्राप्ति होती है।

इस लेख में योगशास्त्र द्वारा शरीर स्वस्थ से आगे अर्थात मन की स्थिरता, ज्ञान प्राप्ति तथा मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

योगशास्त्र का प्रारंभ पतंजलि से नहीं हुआ, यह अति प्राचीन एवं सनातन शास्त्र है संहिता, ब्राह्मण, उपनिषद, महाभारत के शांति पर्व एवं भगवत गीता में भी इसका उल्लेख मिलता है, योग शास्त्र का उगम शिव ने पार्वती से के उपदेशों से हुआ है ऐसा उल्लेख हठयोग में मिलता है। पतंजलि से इसका प्रारंभ नहीं होता पतंजलि को योग का संशोधक एवं प्रचारक माना जा सकता है।

योग का स्वरूप :-

योगाचरण के संबंध में लिंग , वर्ण आदि का विचार नहीं किया गया तथा सभी वर्गों को योगाचरण करने का उपदेश किया गया है ,

यश्रेयं सतवाभूतानां स्त्रीणामपी उपकारकम।

अपी किट पतंगानाम तत्र श्रेय: परम वद।
इत्युक्त: कपिल: पूर्व देव देवऋषिभिस्तथा।
योग एव परम श्रेय तेषां इत्युक्त्त वान पूरा॥
विष्णुधर्म

सांख्य ज्ञान साधन है, तथा योगाचरण यह ज्ञान प्राप्ति के लिए की जाने वाली क्रिया है

।योग शब्द समाधि अर्थक युद्ध धातु से बना है अतः योग का विपत्तिलंबी अर्थ समाधि है।

योग की विभिन्न व्याख्याएं निम्न है :-

1.योगः चित्तवृत्तिनिरोधः। पातंजल योगसूत्र

चित्त की वृत्तियों को रोकना ही योग है चित्त शब्द से मन बुद्धि एवं अहंकार का ग्रहण किया जाता है।

***मनः-**

मन्यते ज्ञायते आनेन इति मनः।

जिसके द्वारा ज्ञान होता है अथवा जो ज्ञान का साधन है उसे मन कहते है।सुख-दुख की उपलब्धि का साधन मन ही है, चिंतन करना विचार करना उहापोह या तर्क करना ,ध्यान करना मनके ही विषय है। इस मन को राजसिक एवं तामसिक गुणों से दूर रखते हुए सात्विक संस्कारों द्वारा संस्कारित करना तथा अहित विषयों से दूर रखना यह योग का साध्य है।

***बुद्धि :-**

सर्वव्यवहारहेतु ज्ञान बुद्धिः।

समस्त व्यवहारों के हेतु ज्ञान को बुद्धि कहा जाता है।

अध्यावसायो बुद्धिः।

आत्मज्ञान प्राप्तकरनेवाले तत्व को बुद्धि कहा गया है बुद्धि योग्य एवं अयोग्य का निर्णय करती है।

***अहंकारः-**

अभिमानो अहंकारः।सुश्रुत शारीर स्थान

अहंकार विमूढात्मा कर्ताऽहमिति मन्यते।भगवद् गीता

सात्विक, राजसिक एवं तामसिक तीन प्रकार के अहंकार बतलाए गए हैं चित्त की वृत्तियों को रोकना अर्थात मन बुद्धि और अहंकार को राजसिक तथा तामसिक गुणों की अधिकता से रोकना एवं सात्विक गुणों का उत्कर्ष कराना यह योग का कार्य है।

चित्त की पांच भूमियां :-

1.क्षिप्त :-का अर्थ चंचल है, इस दशा में चित्त रजोगुण की अधिकता के कारण चंचल एवम अस्थिर हो जाता है। बहिर्मुख होने से सुख-दुख आदि विषयों की ओर स्वता प्रवृति रखता है।

2.मूढः- चित्त तमोगुण की अधिकता के कारण विवेक शुन्य रहता है, कृत्याकृत्य का विवेचन नहीं करता ।क्रोधादि के द्वारा विरुद्ध कार्यों में ही प्रवृत्त रहता है।

3.विक्षिप्तः- दशा में चित्त में सत्य की अधिकता रहती है इस प्रकार यह क्षिप्त दशा से नितांत विशिष्ट होती है। चित्त की अंतिम दोनों दशाओं में सत्व की अधिकता होती है ,इसलिए इन दशाओं में चित्त समाधी के लिए उपयोगी बन जाता है।

4.एकाग्र :- का अर्थ है एक ही विषय को चिंतन करने वाला चित्त।

5.निरुद्ध :- का अर्थ है रुका हुआ चित्त अर्थात वह चित्त जिसकी सारी वृत्तियां रोकी गई या हटाई गई है।

इन पांच भूमियों में से प्रथम 3 समाधि के लिए अन उपयोगी है परंतु अंतिम दो भूमियों में योग का उदय होता है।

चित्त की वृत्तियां - चित्र की वृतियां प्रधानतया पाँच है,

1 प्रमाण :- प्रत्यक्ष अनुमान और शब्द तीन प्रकार के होते हैं।

2 विपर्ययः- किसी वस्तु के मिथ्या ज्ञान को विपर्यय कहते है।

3 विकल्प :- शब्द ज्ञान से उत्पन्न होने वाला परंतु सत्य वस्तु से शुन्य ज्ञान विकल्प कहलाता है।

4 निद्रा :- निद्रा तम की अधिकता पर अवलंबित होनेवाली वृत्ति निद्रा है। जिससे जागृत् और स्वप्न वृत्ति का अभाव रहता है ।

5 स्मृति:- अनुभव किए गए विषयों का बिना परिवर्तन के ठीक-ठीक याद आना स्मृति कहलाता है।

संस्कार जब वृत्तियां उत्पन्न होकर चित्त मे क्षय प्राप्त कर लेती है, तब ये नितांत क्षिण नहीं हो पाती, प्रस्तुत उनका सूक्ष्म स्वरूप संस्कार के रूप में रहता है। यह संस्कार ही उद्बोधक हेतु के होने पर पुन: स्थूल रूप प्राप्त करते हैं और वृत्ति का रूप धारण कर लेते हैं, वृति और संस्कार का परस्पर संबंध वृक्ष और जड़ों के उदाहरण से दर्शाया जा सकता है , जड़े पृथ्वी के नीचे अदृश्य रूप से विद्यमान रहती है और वृक्षों के नाश हो जाने पर अनुकूल परिस्थिति में बढ़कर पेड़ को पौधा कर सकती है, उसी प्रकार वृति तथा संस्कार का एक चक्र होता है, वृत्तियां क्षिण हो जाती है तब संस्कार का रूपा लेती है, विनष्ट नहीं होती प्रत्युत अवचेतन मानस में अत्यंत सुंदर स्वरूप में टिक जाती है, अनंतर वे संस्कार का रूप ग्रहण कर लेती है इस प्रकार सस्कार वृत्तियों द्वारा उत्पन्न होते हैं। पूरा योग तभी होता है जब वृत्ति के साथ साथ उन के संस्कारों का भी निरोध हो जाए स्थूल वृत्तियां तथा सूक्ष्म संस्कार इन दोनों के निरोध होने पर ही योग की पूर्णता सिद्धि होती है ।

चित्त में वृत्तियों का सद्भाव:-

एक वस्तु के ध्यान में चित्त लगाया जाता है तब अन्य वृत्तियां क्षीण होकर उसी वृति को दृढ़ तथा प्रबल बनाती है। उस समय वही वृति मुख्य रहती है तथा ध्यान के प्रकर्ष से प्रज्ञा कहलाती है ।समाधी दो वस्तुओं के घर्षण के साथ यह प्रज्ञा अन्य वृत्तियो का नाश कर देती है ,और कुछ काल तक स्वयं प्रद्योतित रहती है ।जिस समय चित्त अन्य वृत्ति के उपक्षीण होने पर एकाग्र भूमि में एक वस्तु के सतत ध्यान में लगा रहता है उस समय सम्प्रज्ञात समाधि होती है ।इसका फल है प्रज्ञा का उदय , यहां प्रज्ञा वास्तव अर्थ का प्रद्योत करती है समस्त क्लेश का नाश करती है, कर्म बंधनों को शिथिल बनाती है तथा निरोधको अभिमुख करती है।

***समाधि के दो भेद:-**

1)सम्प्रज्ञात-

जब भी वस्तु के ऊपर चित्त चिरकाल तक रहता है योगा का नाम सम्प्रज्ञात/सबीज समाधि है।

2)असंप्रज्ञात समाधि-

जब चित्त की समस्त वृत्ति निरुद्ध या बंद हो जाती है। यहां किसी भी वस्तु का आलंबन नहीं रहता , चीरकाल अभ्यास से साधक का चित्त सब वृत्तियों से निरूद्ध हो जाता है , अर्थात वह पूर्ण आलंबन से धीरे धीरे क्षीण हो जाता है ।और चित्त अपने विशुद्ध निरालंबी दशा में उपनीत होता है।अब चित्त निरुद्ध कहलाता है। इस समाधि के फलस्वरूप आत्मा का साक्षात्कार हो जाता है , अर्थात साधक को यह विवेक ज्ञान हो जाता है कि आत्मा यथार्थ रूप से शरीर मन तथा अहंकार सब उससे भिन्न नहीं, इस दशा में पहुंचने पर आत्मा अपने विशुद्ध चैतन्य रूपों में प्रतिष्ठित होता है, अर्थात यह केवल असंपृक्त रूप से विद्यमान होता है। इसी दशा का नाम

कैवल्य है। योग का यही धेय है।

२. समत्वं योगं उच्यते। भगवद्गीता

सभी वस्तुओं को सामान रूप में देखना अर्थात किसी वस्तु को मान - अपमान, सुंदर - कुरूप ,अच्छा - बुरा, बड़ा - छोटा एसा भेद न करना इसे समत्व कहा गया है। योग साधना के द्वारा होने वाले सत्व गुणोदय तथा ज्ञान के फलस्वरूप इस भावना का उदय होता है। तथा योगी की दृष्टि में किसी भी चेतन या अचेतन द्रव्य में किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं बचता, सुख दुख आदि भावो को भी वह सामान भाव से देखते है। यह दृष्टि योगाभ्यास के द्वारा जागृत चित्तवृत्तियोंके निरोध से ही प्राप्त हेती है।

३. नास्ति योगा परं बलम्।

योग ही पर अर्थात सर्वश्रेष्ठ बल है। अन्य बल जैसे शरीर बल ,मानस बल आदि को अपर अर्थात हीन माना गया है योग का अर्थ जुड़ना है आत्मा का साक्षात्कार अर्थात आत्मा और परमात्मा में एकता का ज्ञान इसे योग कहते हैं, आत्माज्ञान की प्राप्ति के कारण सभी अधिभौतिक, आधिदैविक,आध्यात्मिक कष्टों का असर योगी पर नहीं होता अर्थात बुद्धि सम होने के कारण इन दु:खो से वो दुखी नही होता, इसीलिए योग को सर्वोत्तम बल कहा गया है।

४ इंद्रीय वशित्वम् योग।

५ इंद्रियां वशं करुते।

पांच ज्ञानेंद्रियां, पांच कर्मेंद्रिय तथा मन इन्हें इंद्रिया कहा जाता है तथा इन इंद्रियों को वश में करना , इंद्रियों के विषयों का उपभोग संयमित रूप से भोगना अर्थात विषय वासना में लिप्त न रहना और अहित विषयों से इंद्रियों को दूर रखना यह कार्य योग द्वारा साध्य होता है इसलिए कठोपनिषद तथा मनुस्मृति योग की व्याख्या इंद्रियों को वश में करने का साधन इस प्रकार करता है ।इंन्द्रीया वश में होने के उपरांत ज्ञान तथा मोक्ष प्राप्ति की ओर अग्रसर होता है।जिस से आगे आत्मा का साक्षात्कार होकर योग सिद्धि होती है।

अष्टांगयोग

यम, नियम ,आसन ,प्राणायाम ,प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि को अष्टांगयोग कहा गया है।

इन आठ अंगों को सिद्ध करने से चित्तवृत्तियों का निरोध होता है एवं कैवल्य प्राप्ति होती है।

यम -

यम का अर्थ संयम है

अहिंसा ,सत्य ,अस्तेय, ब्रह्मचर्य ,अपरिग्रह यम:।

अहिंसा- सर्वदा तथा सर्वथा सर्व प्राणियों के ऊपर द्रोह न करना,

सत्य- मन और वचन का यथार्थ होना अर्थात जैसा देखा गया था अनुमान किया गया हो उसी के समान मन तथा वचन का होना,

अस्तेय- चोरी न करना अर्थात दूसरों के द्रव्य के लिए स्पृहा न रखना,

ब्रम्हचर्य- गुप्द्रीतेंद्रिय उपस्थ का संयम,

अपरिग्रह- विषय के अर्जन ,रक्षण आदि दोष होने से उन्हें स्वीकार न करना।

नियम:-

का अर्थ सदाचार का पालन करना है

शौच- अभ्यंतर और बाह्य शुद्धि

संतोष- सन्निहित साधनों से अधिक वस्तुओं के ग्रहण करने की इच्छा न होना।

तप- सुख-दुख आतप शीत भूख प्यास सभी द्वंद्व को सहन तथा कठिन व्रत का पालन
स्वाध्याय- मोक्ष शास्त्रों का अध्ययन और प्रणव का जप
ईश्वरप्रणिधान- ईश्वर को भक्ति पूर्वक सब कर्म समर्पण करना
आसन-

स्थिरसुखम् आसन।

स्थिरता तथा सुख देने वाली शारिरीक स्थिती के प्रकार है उन्हें आसन कहते है , इन आसनों के अभ्यास करने से चित्त स्वाभाविक चंचलता का परित्याग करता है तथा एकाग्रता प्राप्त करता है।आसनजय करने से द्वंद्व जन्य पीड़ा नहीं होती।
प्राणायाम-

आसन जय होने पर श्वास प्रश्वास के गति विच्छेद का नाम प्राणायाम है, प्राणायाम के अभ्यास से विवेक ज्ञान को आवरण करने वाले दोषों का नाश हो जाता है तथा मन एकाग्रचित होने के योग्य बन जाता है।
प्रत्याहार-

जब विभिन्न इंद्रिया अपने बाह्य विषयो से हटकर चित्त समान निरुद्ध हो जाता है, तब इसे प्रत्याहार कहते हैं, अर्थात बहिर्मुखी वृत्तियां इंद्रियां बाहरी विषय से हटकर अंतर्मुखी हो जाती है तब उनका प्रत्याहार निष्पन्न होता है। इसका फल यह है कि इंद्रियों के ऊपर पूरी वश्यता स्थापित हो जाती है।प्रत्याहार के अभ्यास से यह इंद्रियां मन के कब्जे में आ जाती है। यम नियम आसन प्राणायाम और प्रत्याहार बहिरंग साधन फैलाते हैं।
धारणा-

किसी देश में या बाह्य पदार्थ में चित्त को लगाना संबंध कर देना धारणा कहलाता है। प्राणायाम से पवन और प्रत्यय से इंद्रियों के वश में हो जाने पर चित्र में विक्षेपण की संभावना नहीं रहती, अतः वह एक स्थान पर सफलतापूर्वक लगाया जा सकता है।
ध्यान-

उस देश विशेष में धेय वस्तु का ज्ञान जब एकाकार रुप से प्रवाहित होता है और उसे दबाने के लिए कोई अन्य ज्ञान नहीं होता इसे ध्यान कहते हैं ।
समाधि :-

समाधि शब्द का व्युत्पत्ति अर्थ है विक्षेपो को हटाकर चित्त का एकाग्र होना, जहां पर ध्यान यह वस्तु के आवेशों से मानो अपने स्वरूप से शुन्य हो जाता है और धेय वस्तु का आकार ग्रहण कर लेता है वह समाधि कही जाती है।
कैवल्यप्रकृति:-

जब चित्त वृत्तिरहित हो जाता है, तब उसे उस दशा में प्रतिष्ठित होने के लिए साधक को लगातार इतना करना चाहिए, इसी का नाम अभ्यास है अभ्यास को दृढ करने के लिए बहुत दिनों तक आग्रह पूर्वक वैराग्य का अवलंबन करना होता है।
समाधि इसमें चित्तवृत्तियों का ध्यान नहीं होता धेय वस्तु की चाह नहीं रहती ,समाधि के दो प्रकार है सम्प्रज्ञात और असंप्रज्ञात।
योग प्रतिबंधक विघ्न:-

व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक ,लौकीकआचार, धार्मिकआचार ,पूजा पाठ, स्नान-संध्या, यज्ञ-याग आदि लोकसंग्रह प्रसिद्धि के लालच में आकर भाषण प्रवचन

विद्या का प्रदर्शन, दानशीलता आदि का प्रदर्शन रजो तथा तमोगुण प्रधानता के कारन,सुखोंपभोगकी लालसा यथा स्त्री संग सुख शय्या, नशाकरना इत्यादि।

अत्यधिक भोजन ,अत्यधिक श्रम, वार्तालाप नियमों का पालन, अति लोकसंपर्क, सुखकारक पंचे विषयों का आग्रह यह भी व्यत्यय कारक है, तथा दोषो की वृद्धि करवाते हैं, शरीर का व्याधिग्रस्त होना योग की सफलता के विषय में सशंकता की वृत्ति, सही योग शिक्षा का अभाव, अभ्यास न करना ,स्वभाव में चंचलता ,जिन्हें इंद्रीय संयम नहीं तथा विषयासक्ति की लालासा है ,योग के प्रति जिज्ञासा का अभाव तथा केवल दिखावे के लिए योग साधना करते हैं उन्हें योग साध्य नहीं होता , दिन में सोना, वेगधारण ,अतिभ्रमंती ,अतिमैथून ,विषमआशन, अतिश्रम, मृत्यु से भय इंन कारणों से भी योग की सिद्धि नहीं हो पाती।

योग सिद्धि कर भाव योग्य शिक्षा का अभाव, उचित प्रमाण में आहार, मसाले दार एवं चटपटे आहार में रूचि तथा अधिक मात्रा में ऐसे आहार का सेवन करना, सुपच आहार धातु का उचित पोषण दोषो का उद्धरण अम्ल लवण तथा कटु रस उष्ण तीक्ष्ण विदाही आहार का त्याग, दुग्ध मधुर स्निग्ध सुपात्र होने के कारन तथा मन में सत्व गुण की वृद्धि करने से इसका सेवन करे। मिताहार आमाशय का एक भाग खाली रखना , सरसों, प्याज, लहसन ,विदाही- पदार्थ, कुलथी ,मसूर कद्दू, हींग ,मांस-मछली इनका सेवन ना करें , षष्टिशाली चावल, गो दुग्ध, मधुर रसात्मकं आहार फल इनका आहार में सेवन,

आहरमात्रा:-

कुकुटांड़ के आकार का कवल बना कर

8 ग्रास - सन्यासी,

16 ग्रास- वानप्रस्थी,

32 ग्रास-गृहस्थ,

24 ग्रास- योगसाधक के लिए आहार की मात्रा बताई गयी है।

Conclusion:

1.योग सर्वोत्तम मोक्ष उपाय बतलाया गया है।

2. भक्ति और ज्ञान का प्रधान सहायक है।

3.प्रतिभा ज्ञान की अंतर्दृष्टि को उत्पन्न करने में योग ही प्रधान कारण है

सम्दर्भग्रंथ -

- भारतीय दर्शन , बलदेव उपाध्याय, शारदा मंदिर वाराणसी।

- पदार्थ विज्ञान - डा बी के द्विवेदि, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।

- स्वस्थवृत्त, सुभाष रानडे, गो रा परांजपे, भा वि साठ्ये, अनमोल प्रकाशन पुणे।